संक्षिप्त मोनोग्राफिक सिरीज न. 7

मुण्डा

सोमा सिंह मुण्डा
सहायक निदेशक (सेवा निवृत्त)

प्रकाशक
डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान,
मोराबादी, राँची
अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अल्पसंख्यक एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग
झारखण्ड सरकार

मुण्डा

सम्पादक –

रणेन्द्र कुमार

निदेशक, डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची

प्रकाशक

डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान

राँची – 834008

प्रथम संस्करण - 1993

पुनर्मुद्रण - 1998

पुनर्मुद्रण - 2008

पुनर्मुद्रण - 2020

© डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, रांची।

आवरण पृष्ठ : विकास अग्रवाल, कलाकोष, रातू रोड, राँची

मूल्य : पच्चीस रुपये मात्र

मुद्रक : कैलाश पेपर कन्वर्शन (प्रा.) लिमिटेड, राँची।

दो शब्द

झारखण्ड प्रान्त में ''मुण्डा'' मुख्य जनजातियों में से एक है। जनसंख्या के दृष्टिकोण से झारखण्ड में मुण्डा जनजाति का तीसरा स्थान है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या 1049767 है, जो कुल जनजातीय जनसंख्या का 14.81 प्रतिशत है। इसकी साक्षरता 39.22 प्रतिशत है जबकि कुल जनजातीय साक्षरता में इनका प्रतिशत 17.60 है।

मुण्डा जनजाति की अपनी भाषा एवं संस्कृति है। सदियों से मुण्डा भाषा मौखिक परम्परा पर ही संरक्षित होती रही है। पुस्तकों के अभाव में मुण्डा भाषा एवं संस्कृति होने के बावजूद हमेशा खतरे में पड़ते आ रहे हैं। शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा बाह्य लोगों से इनका सम्पर्क दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। फलतः मुण्डाओं के जीवन–मूल्यों में स्वाभाविक रूप से परिवर्तन होता जा रहा है। वर्तमान समय में मुण्डा समाज की स्थितियों को देखकर ऐसा लगता है कि मुण्डा लोग अपनी संस्कृति के प्रशस्त मार्गों को छोड़कर अन्यत्र कहीं भटक रहे हैं और अपने अस्तित्व को खो रहे हैं। अतः यह आवश्यक समझा गया कि मुण्डा जनजाति पर एक संक्षिप्त आलेख लिखा जाय।

प्रस्तुत शोध आलेख समयाभाव में लिखा गया है। फिर भी मुण्डा जनजाति के जीवन पहलुओं को संक्षिप्त रूप में विषय–वस्तु के दायरे में समेटने का यथेष्ट प्रयास किया गया है। यह कृति न केवल मुण्डा समाज एवं संस्कृति की सुरक्षा और विकास में योगदान देगी, बल्कि जनजातीय क्षेत्र में काम करने वाले सरकारी कर्मचारियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

संस्थान के निदेशक डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव के प्रति मैं आभार अर्पित करता हूँ जिन्होंने मुझे प्रस्तुत शोध आलेख तैयार करने का अवसर प्रदान किया। मुण्डा समाज के उन लोगों को मैं धन्यवाद देना चाहूँगा, जिन्होंने तथ्य संकलन करने में भरसक मेरी मदद की है। अन्त में संस्थान के उन कर्मचारियों को भी धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने अपना बहुमूल्य समय देकर प्रस्तुत शोध आलेख तैयार करने में सहयोग प्रदान किया।

झारखण्ड जनजातीय कल्याण शोध संस्थान
मोराबादी, राँची–8

सोमा सिंह मुण्डा
सहायक निदेशक

प्राक्कथन

ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवार की मुण्डारी भाषा–भाषी मुण्डा जनजातीय समुदाय झारखंड राज्य का एक महत्त्वपूर्ण समुदाय है। मुण्डा समुदाय का अद्योपांत नृशास्त्रीय अध्ययन इस छोटी–सी पुस्तिका में प्रस्तुत है जिसमें उनके भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक जीवन के सारे आयाम वर्णित हैं।

उल्लेखनीय है कि इस पुस्तिका के रचनाकार श्री सोमा सिंह मुण्डा संस्थान के सेवा–निवृत सहायक निदेशक एवं स्वयं मुण्डा समुदाय के सदस्य हैं। अतएव इस जनजातीय समुदाय के बारे में जो ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक तथ्य प्रस्तुत किये गये हैं वे न केवल पूर्व प्रकाशित शोध ग्रन्थों के गहन अध्ययन बल्कि स्वानुभूति की कसौटी पर भी कसे गए हैं। अतएव इनमें त्रुटियों की संभावना नगण्य हो गई है।

इस महत्त्वपूर्ण पुस्तिका के सृजन के लिए श्री सोमा सिंह मुण्डा, पूर्व सहायक निदेशक एवं डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव, पूर्व निदेशक के प्रति यह संस्थान हार्दिक आभार ज्ञापित करता है।

चिंटू दोराईबुरू (झा.प्र.से.)
उप-निदेशक

रणेन्द्र कुमार (भा.प्र.से.)
निदेशक

परिचय

छोटानागपुर के प्राचीन इतिहास में यदि किसी समाज का नाम आता है तो मुण्डा समाज ही है। मुण्डा जनजाति दक्षिण–पूर्व एशिया में केंद्रित आस्ट्रॉलॉयड (आग्नेय) प्रजाति परिवार की एक विशिष्ट जाति है, जो बिहार, झारखण्ड, बंगाल, मध्यप्रदेश, उडिसा तथा त्रिपुरा में निवास करती है। फिर भी मुण्डाओं की घनी आबादी झारखण्ड प्रान्त के छोटानागपुर प्रमंडल के राँची जिले में पायी जाती है। छोटानागपुर की पृष्ठभूमि में मुण्डाओं के आगमन के सम्बन्ध में श्री शरत चन्द्र राय का कहना है कि वे उत्तर–पश्चिम भारत से बुंदेलखण्ड, आजमगढ़ तथा रोहतासगढ़ होते हुए छोटानागपुर में आये। इस प्रकार से इस भू–भाग में मुण्डा जनजाति के लोगें ने सुसंगठित समाज एवं समुन्नत संस्कृति को लेकर पदार्पण किया।

मुण्डा शब्द मूलतः संस्कृत के ''मुण्ड'' शब्द से बना है। संस्कृत शब्द में ''मुण्ड'' का अर्थ है ''सिर''। मुण्डारी भाषा में ''मुण्डा'' शब्द का अर्थ है – गाँव का मालिक, प्रतिष्ठित व्यक्ति, मुण्डा जनजाति और मुण्डा भाषा जो मुण्डारी कहलाती है। 'हो' जनजातियों में भी गाँव के मालिक को मुण्डा कहा जाता है। मुण्डा जनजाति के लोग अपने को ''होड़ो'' जाति मानते हैं। उसी प्रकार से 'हो' जनजाति के लोग भी अपनी जाति को 'हो' और संताल जनजाति के लोग ''होड़'' कहते हैं। इन तीनों शब्द होड़ो, हो और होड़ का अर्थ 'आदमी' होता है। अर्थात् उनकी जाति आदमी छोड़कर कुछ भी नहीं है। इस तरह से मुण्डा लोग अपनी भाषा को ''होड़ो जगर'' कहते है। मुण्डा जनजाति को झारखण्ड की अन्य जनजातियों की तरह भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजाति कहा गया है। इनकी अपनी संस्कृति है। इनके रहन–सहन, आचार–विचार तथा पूजा–पाठ के विधि–विधान अपने हैं। इनके सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन भौगोलिक स्थिति से प्रभावित हैं। ये प्रकृति की गोद में रहते हैं और प्राकृतिक सौन्दर्य की छवि इनमें झलकती है। ये अत्यन्त सरल स्वभाव के होते हैं और छल कपट से परे हैं। ये अपने श्रम और संघर्ष के बल पर आगे बढ़ते आ रहे हैं।

विषय सूची

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठ सं
प्रथम	भौगोलिक स्थिति	1–5
द्वितीय	सामाजिक स्थिति	6–15
तृतीय	जीने की कला	16–18
चतुर्थ	धार्मिक स्थिति	19–21
पंचम	राजनैतिक स्थिति	22–23
षष्ठम	सामाजिक परिवर्त्तन	24–25
सप्तम	विकास कार्य	26–27
	राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम	28–29
	उपसंहार	29–35
	संदर्भ सूची	36

प्रथम अध्याय

भौगोलिक स्थिति

झारखण्ड प्रान्त में 'मुण्डा' जनजाति अन्य मुख्य जनजातियों में से एक है। यह एक वृहद् समुदाय के रूप में छोटानागपुर प्रमंडल में निवास करती है। छोटानागपुर प्रमंडल में 'मुण्डा' जनजाति के आगमन के सम्बन्ध में श्री शरत चन्द्र राय ने अपनी पुस्तक ''दि मुण्डाज़ एण्ड देयर कन्ट्री'' 1912 में लिखा है कि मुण्डा लोग सबसे पहले भारत के उत्तर–पश्चिम भाग में स्थित नदी, घाटी एवं पहाड़ी दर्रों के आस–पास निवास करते थे। ऋग्वेद, रामायण तथा महाभारत आदि– ग्रन्थों के आधार पर श्री राय मुण्डाओं के भ्रमण के बारे में बताते हैं कि आर्यों द्वारा मुण्डाओं को पूरब की ओर खदेड़ दिये जाने पर वे उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में जा बसे। फिर उत्तरी भारत के दक्षिणी भाग से बुन्देलखण्ड होते हुए मध्यभारत की ओर बढ़े। फिर वे राजपूताना तथा उत्तर–पश्चिमी भारत में बसे। बाद में आधुनिक रोहिलखण्ड, अवध और रोहतासगढ़ होते हुए आये और अन्त में झारखण्ड प्रान्त के छोटानागपुर प्रमंडल में आकर वैसे स्थान में बसे जो राँची, हजारीबाग तथा पलामू जिले को पृथक करता है। इस स्थान को शेखरभूम कहते हैं। संभवतः वहीं से वे लोग उमेडण्डा होते हुए सुतियाम्बेगढ़ आये। सुतियाम्बेगढ़ राँची जिलान्तर्गत जिला मुख्यालय से लगभग 16 कि़मी़ उत्तर में अवस्थित है। यह गढ़ मुण्डाओं की प्रशासनिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृति व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु था, जिसके अवशेष अभी भी देखने को मिलते हैं।

छोटानागपुर में धीरे–धीरे मुण्डाओं की जनसंख्या में वृद्धि होती गई और वे नये सुरक्षित निवास स्थान की खोज करते गये। इसी क्रम में मुण्डा वंशज के दो भाइयों–चूटूहड़म और नागुहड़म के नेतृत्व में वे राँची जिलान्तर्गत डोमडागाड़ा नदी के समीप पहुँचे। उन्होंने नदी की धारा में बहते हुए एक लकड़ी के कुन्दे के सहारे नदी को पार किया। लकड़ी के उस कुन्दे में छेद था। उसी छेद में एक चूहा था। चूहे को देखकर उसे उन्होंने शुभ लक्षण माना और उसी नदी के किनारे अपना बसेरा बसा लिया। इस स्थान का नाम परिवर्तित होकर चुटिया हो गया। किन्तु कालान्तर में 'चुटिया' छोटा हो गया और 'नागु' नाग। इन दोनों भाइयों के नाम से छोटानागपुर नाम पड़ा। इसके पहले लोग छोटानागपुर को हीरानागपुर के नाम से जानते थे।

सुरक्षित निवास स्थान की खोज में कुछ लोग खूँटी अनुमंडल के अन्तर्गत मरंगहदा के निकट तिलमा गाँव में बसे। उनमें से एक दल मझिया मुण्डा के नेतृत्व में तमाड़ पहुँचा और तमाड़ के निकट उन्होंने माँझीडीह गाँव बसाया। माँझीडीह से चलकर रंका मुण्डा के नेतृत्व के कुछ लोग उलिहातु, जो अड़की प्रखण्ड के अन्तर्गत है, में जाकर बस गये। यही लोग धरती आबा बिरसा मुण्डा के वंशज थे। कालान्तर में तमाड़ से मुण्डाओं का एक दल सिंहभूम चला गया और वहाँ जाकर वे ''हो'' कहलाये। एक दल शेखरभूम से ही अलग होकर दामोदर नदी के पार समतल क्षेत्र में जा वसा, वे ''संताल'' कहलाये।

देशान्तर गमन के क्रम में यदि देखा जाय तो मुण्डा लोगों ने अपने रहने के लिए नदी के किनारे, झरने के समीप, पहाड़–पर्वतों से घिरा शान्त एवं एकान्त स्थानों को ही पसन्द किया है। जहाँ उन्हें दैनिक जीवन में आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि आसानी से हो जाती थी। नदी तथा झरने से उन्हें पानी मिलता था। जंगलों से कन्द, मूल, फल, साग–सब्जी इत्यादि खाद्य पदार्थों के अलावा जलावन की लकड़ी, मकान बनाने की लकड़ी, जड़ी–बूटी इत्यादि सुगमता से मिल जाया करते थे। जंगलों के बीच रहकर उन्हें जंगली जानवरों के साथ मुकाबला भी करना पड़ता था और उनका वे शिकार भी करते थे। शिकार में मारे गये जानवरों को वे आहार के रूप में खाते थे। धीरे–धीरे उन्होंने जंगल–झाड़, नदी–नाला साफ करके खेती लायक जमीन बनायी और उस पर वे खेती करने लगे। इस प्रकार से मुण्डाओं का जीवन हमेशा संघर्षमय रहा है और प्रकृति की गोद में ही पला है। यही कारण है कि प्रकृति की सरलता इनके स्वभाव में भी पायी जाती है।

वर्तमान समय में मुण्डा जनजाति के लोग गाँवों या टोलों में स्थायी रूप से निवास करते हैं। इनके गाँव या टोले प्रखण्ड मुख्यालयों से सुदूर पहाड़ी एवं जंगली इलाकों में बसे आज भी देखने को मिलते हैं। इनके गाँव तक जाने के लिए नदी–नाला, पहाड़ी–दुर्गम मार्गों से गुजरना पड़ता है। किन्तु सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वित होने से धीरे–धीरे उनकी भौगोलिक पृथकता में कमी आ गयी है और बाहरी लोगों से भी उनका सम्पर्क बढ़ गया है।

जनसंख्या : जनसख्या की दृष्टिकोण से झारखण्ड की जनजातियों में मुण्डा का तीसरा स्थान है। सन् 2001 ई. के जनगणनानुसार मुण्डा जनजाति की जनसंख्या 1049767 है। इसमें से पुरुष 526528 और महिला 523239 हैं। विगत पाँच दशक में मुण्डा जनजाति की जनसख्या इस प्रकार रही है।

वर्ष	जनसंख्या
1961	628931
1971	723166
1981	845887
1919	899162
2001	1049767

झारखण्ड में सन् 1991 की जनगणना के अनुसार मुण्डा जनजाति की जनसंख्या का जिलावार वितरण इस प्रकार है –

	जिला का नाम	मुण्डा जनजाति की जनसख्या
1	राँची	461002
2	लोहरदगा	5905
3	गुमला और सिमडेगा	156995
4	साहेबगंज और पाकुड़	6352
5	देवघर	169
6	दुमका और जामताड़ा	897
7	गोड्डा	432
8	पलामू, गढ़वा और लातेहार	19225
9	पश्चिमी सिंहभूम और सरायकेला–खरसावाँ	133129
10	पूर्वी सिंहभूम	41423
11	हजारीबाग, चतरा और कोडरमा	52254
12	धनबाद और आंशिक बोकारो	10599
13	गिरिडीह और आंशिक बोकारो	10780
	कुल योग	**899162**

भाषा : :मुण्डा जनजाति की भाषा मुण्डारी है, जो ऑस्ट्रो एशियाटिक भाषा परिवार के अन्तर्गत आती है। वे अपनी भाषा को ''होड़ोजगर'' कहते हैं। इस मुण्डा भाषा के अन्तर्गत संताली, हो, खड़िया, असुरी, बिरहोरी आदि बोलियाँ आती हैं। यह भाषा अन्य बोलियों की अपेक्षा अधिक क्लिष्ट है। इस बदलते परिवेश में भी अपनी मौलिक विशेषताओं को मुण्डाओं ने अक्षुण्ण रखा है। लेकिन क्षेत्र विशेष के आधार पर इस भाषा पर बाह्य प्रभाव में कमी–बेसी हुई है।

मुण्डारी क्षेत्र को चार भाषा परिक्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है– हसादः, नागुरी, तमड़िया और केरः मुण्डारी। हसादः– मुण्डारी खूँटी जिला के खूँटी, मुरहू और अड़की प्रखण्ड तथा पश्चिमी सिंहभूम जिले के बन्दगाँव, सरायकेला, खरसावाँ जिले के कुचाई तथा खरसावाँ प्रखण्ड के मुण्डाओं द्वारा बोली जाती है। इसी बोली में मुण्डा भाषा की मौलिकता छिपी हुई है। इस क्षेत्र में अभी भी ऐसे गाँव मिलेंगे जहाँ के अशिक्षित मुण्डा अपनी बोली के अलावा अन्य बोली से परिचित ही नहीं हैं।

दूसरी नागुरी मुण्डारी है जो खूँटी जिले के कर्रा, तोरपा, रनिया और राँची जिले के लापुंग तथा सिमडेगा जिले के बानो, कोलेबिरा तथा सिमडेगा प्रखण्ड के अलावा उडिसा के सुन्दरगढ़ इलाके के मुण्डाओं में प्रचलित है। इस क्षेत्र की मुण्डारी बोली की विशेषता यह है कि इसमें सदानी या नागपुरी बोली का सम्मिश्रण है।

तीसरा तमड़िया मुण्डारी है जो राँची जिलान्तर्गत तमाड़, बुण्डू और सोनाहातु प्रखण्ड तथा खूँटी जिलान्तर्गत अड़की प्रखण्ड के पूर्वी क्षेत्र में बोली जाती है। इस क्षेत्र में बंगला तथा बंगला मिश्रित पंचपरगनिया बोली की प्रधानता है। इसलिए इस क्षेत्र की मुण्डारी में बंगला का पुट मिलता है।

चौथी है केरः मुण्डारी जो राँची शहर के आस–पास रहने वाले मुण्डा तथा उराँव जनजातियाँ द्वारा बोली जाती है। इसमें 'रः' ध्वनि की प्रधानता पायी जाती है। इसलिए इसे केर; मुण्डारी कही गयी है। उराँव जनजातियों द्वारा मुण्डारी बोलने की पुष्टि हॉफमैन ने भी ''इनसाइक्लोपीडिया मुण्डारीका'' में की है।

अविभाजित बिहार में सन् 1961 की जनगणनानुसार हिन्दी बोलने वालों की संख्या 20567775 और मुण्डारी बोलने वालों की संख्या 381913 थी। हिन्दी बोलने वाले मुख्यतः उत्तर भारत में हैं और मुण्डारी बोलने वाले मुख्य रूप से झारखण्ड के राँची, खूँटी, सिमडेगा, पश्चिम सिंहभूम तथा सरायकेला–खरसावाँ जिले में पाये जाते हैं। झारखण्ड के अतिरिक्त बिहार, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, उडिसा, पंजाब, बंगाल, हिमाचल प्रदेश, अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह, त्रिपुरा तथा उत्तर–पूरब सीमान्त प्रदेशों में छिटपुट रूप से मुण्डारी बोली जाती है। 1961 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण भारत में मुण्डारी बोलने वालों की संख्या 736324 थी जबकि 1991 में वृद्धि होकर 861378 हो गयी है।

आज के शिक्षित मुण्डा युवक–युवतियाँ अपनी मुण्डारी भाषा को भूलते जा रहे हैं। मुण्डा समाज में जो लोक–गीत, लोक–कथाएँ इत्यादि हैं वे सिर्फ अशिक्षित मुण्डा युवक–युवतियों के कंठ में सुरक्षित हैं। लेकिन कब तक सुरक्षित रह पाएंगे। लोक जीवन के अस्तित्व को बचाये रखने में लोक–गीत और लोककथाओं का विशेष योगदान है। इसलिए इसकी रक्षा अनिवार्य है। डब्लू. जी. आर्चर की पुस्तक ''मुण्डा–दुरंड़'' (मुण्डागीत) और श्री जगदीश त्रिगुणायत की ''बाँसुरी बज रही'', ''सोसो बोंगा'' तथा ''मुण्डा लोक–कथा संग्रह'' नामक पुस्तक मुण्डारी लोक–गीतों और लोक–संस्कृति को विलुप्त होने से बचाने में बड़ी कारगर साबित हुई हैं।

द्वितीय अध्याय

सामाजिक स्थिति

मुण्डा जनजाति का समाज पितृसत्तात्मक है। पैतृक सम्पत्ति का अधिकारी पिता के दल का ही पुरुष होता है। इसके अन्दर गोत्र प्रमुख है, जिनके आधार पेड़–पौधे, पशु–पक्षी होते हैं। इस नियम का उल्लंघन करने वाले को समाज बाहर से कम की सजा नहीं मिलती। परिवार उनके सामाजिक संगठन का महत्त्वपूर्ण भाग है। परिवार जो मुख्यतः ''एकाकी'' और संयुक्त होता है, उसकी परिधि में माता–पिता तथा उनकी अविवाहित सन्तानें आती हैं। इनमें ''नातेदारी'' की व्यवस्था है। जिनका स्वरूप वर्गानुसार होता है। इसी आधार पर सम्बंधियों के एक समूह को एक प्रकार का नाम दिया जाता है। इनका समाज सुसंगठित है। समस्त मुण्डा जनजाति मुख्यतः दो शाखाओं में विभक्त है। बड़ी शाखा ''महली को'' तथा छोटी शाखा ''कुम्पाट मुंडाको'' है।

उप-जाति : मुण्डा जनजाति 13 उप–शाखाओं में विभक्त है– भुईहर–मुण्डा, खाँगार–मुण्डा, कारेंगा–मुण्डा, मानकी–मुण्डा, खड़िया–मुण्डा, कोल–मुण्डा, नागवंशी–मुण्डा, उड़ाँव–मुण्डा, साद–मुण्डा, सावर–मुण्डा, माँझी–मुण्डा आदि। उप–शाखा में विभक्त होने के कारण या तो अन्य जनजातियों के साथ वैवाहिक सम्बंध स्थापित करना या सामाजिक मान्यताओं के विपरीत कर्म करना रहा होगा। कुछ तो जमीन तथा सामाजिक व्यवस्था के आधार पर विभक्त हुए और कुछ तो वंश परम्परा तथा अपनी उत्पत्ति सम्बंधी परम्परागत धारणाओं एवं मान्यताओं को आधार मानते हुए एक दूसरे से अलग हुए।

खड़िया–मुण्डा, उराँव मुण्डा की उत्पत्ति अपने पड़ोसी जनजातियों से वैवाहिक सम्बंध स्थापित करने से हुई। किन्तु भुईहर–मुण्डा, मानकी–मुण्डा का सम्बंध जमींदारी से है। जो मुण्डा गाँव का मालिक हो और भुईहरी मुण्डाई जमीन का उपभोग करता हो तो वह भुईहर मुण्डा कहलाया। उसी प्रकार से प्रत्येक गाँव में एक मालिक होता है जिसे ''मुण्डा'' कहा जाता है और दो या दो से अधिक गाँव मिलकर एक मानकी होता है। मानकी के क्षेत्र को मानकी पट्टी कहा जाता है। खूँटी जिले के पूर्वी और दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्र जो मुण्डाओं को क्षेत्र है, में आठ मानकी पट्टी है – 1. सन्डी गाँव, 2. कोटा–कुलीपिड़ी,

3. गोवा, 4. चलम, 5. जिउरी, 6. किताहातु, 7. जोजोहातु, 8. लन्दुब। इन गाँवों मे एक–एक मानकी हैं। इनके क्षेत्रान्तर्गत जो मुण्डा हैं वे अपने–अपने गाँव का मालगुजारी असामियों से वसूल कर मानकी को और मानकी राजा को और राजा महाराजा को देते थे। किन्तु राजाओं और महाराजाओं की जमींदारी होने पर अब वे सरकार को देते हैं।

कुम्पाट–मुण्डा, चूँकि वे अपने को भूमि की कोख से उत्पन्न मानते हैं, इसलिए वे कुम्पाट–मुण्डा कहलाये जबकि नागवंशी–मुण्डा अपने को नागदेवता की सन्तान के रूप में मानते हैं। मुण्डा की उपजाति में ''महली–मुण्डा'' भी एक है जो राँची जिलान्तर्गत तमाड़ क्षेत्र में निवास करती है। इसे पातर–मुण्डा भी कहा जाता है। तमाड़ क्षेत्र से पलायन कर जो महली मुण्डा अथवा पातर मुण्डा सिंहभूम जिले में जाकर बस गये है वे ''तमड़िया'' कहे जाते हैं, जबकि तमड़िया नाम की कोई जाति नहीं है। चूकि वे तमाड़ क्षेत्र में गये हैं, इसलिए तमड़िया कहे गये। किन्तु झारखण्ड की जाति सूची में तमड़िया पिछड़ी जाति के रूप में दर्ज हो गयी है।

गोत्र-विधान :- मुण्डा समाज का मूल आधार गोत्र है। गोत्र को इष्ट चिह्न के रूप में मानते हैं। इसकी रक्षा वे अपनी जान तक देकर करते हैं। मुण्डा जनजाति का गोत्र पेड़–पौधे, पशु–पक्षी आदि के नाम पर होते हैं। इस प्रकार से वे विभिन्न गोत्र में विभक्त हैं। जैसे साण्डिल, होरो, नाग, कमल, केरकेट्टा, पुर्ती, हंस, हस्सा, भालू, तिड्डू, टुटी, डाँग, बोदरा इत्यादि। रिजले के अनुसार मुण्डाओं के कुल 340 गोत्र हैं। नाग गोत्र वाले नाग–साँप की पूजा करते हैं। उसे वे मारते नहीं हैं। होरो का अर्थ होता है कछुआ। होरो गोत्र वाले कछुआ को न खाते हैं और न मारते हैं, वे उनकी रक्षा करते हैं। मुण्डा समाज में सगोत्रीय विवाह वर्जित है। इसीलिए बहिर्गोत्र में ही शादी संम्बंध स्थापित किया जाता है। एक गोत्र वाले आपस में एक दूसरे को भाई–बहन के रूप में मानते हैं। यदि कोई सगोत्रीय विवाह करता है तो वैसी स्थिति में उसे अवैध घोषित किया जाता है और लड़का–लड़की दोनों को समाज से बाहर कर दिया जाता है।

सम्भवतः किसी समय मुण्डा लोग अपने गोत्र के अनुसार अलग–अलग गाँव में रहा करते थे, किन्तु अब ऐसी बात नहीं है। फिर भी मरने के बाद

जब अस्थि कलश का विसर्जन किया जाता है तो अपने ही गोत्र के हड़गड़ी उक ससान में गाड़ा जाता है। अर्थात् गाँव में एक साथ रहते हुए भी गोत्र के अनुसार हड़गड़ी उक ससान अलग–अलग स्थान में अवस्थित होता है। मुण्डा समाज में हड़गड़ी उक ससान का स्थान बडे महत्त्व का है। हड़गड़ी उक ससान से पता चलता है कि कौन मुण्डा किस गाँव का मूल निवासी है।

नातेदारी : मुण्डा समाज में रिश्ते को नाता कहा जाता है। रिश्ते कई तरह के होते हैं। कुछ रिश्ते ऐसे हैं जिसे परिहास के रिश्ते कहे जाते हैं। परिहास रिश्ते के संदर्भ में हँसी–मजाक किया जा सकता है। किन्तु कुछ रिश्ते सम्मानजनक होते है जो अपरिहास होता है। मुण्डाओं में परिहास के रिश्ते इस प्रकार हैं– 1. भौजाई और देवर या ननद, 2. बहनोई और छोटे साले या साली, 3. दादा–दादी और पोता–पोती, 4. नाना–नानी और नाती नतनी तथा 5. समधी–समधी या समधि–समधिन में परिहास या हँसी मजाक की बात चलती है।

देवर–भौजाई और साली–बहनोई में तो विवाह या पुनर्विवाह भी चलता है। परन्तु भैसुर (पति के बड़े भाई) और जेठ सास (पत्नी की बड़ी बहन) को देवता तुल्य माना जाता है। उनसे छुआना मना है। उनके बिछावन पर बैठने की तो बात अलग रही, उनका नाम तक लेना वर्जित है। इतना ही नहीं उनकी परछाई से भी दूर रहना पड़ता है। यदि किसी कारणवश भूल से एक दूसरे से छुआ जाए तो उसे सामाजिक दण्ड स्वरूप सम्बन्धियों को भोज खिलाना पड़ता है। सास–ससुर को माता–पिता की तरह पूज्य माना जाता है। पति की बहन को भी सम्मानपूर्वक संबोधन किया जाता है। यदि जेठ साली की शादी न हुई हो और उनसे छोटी बहन की शादी हो रही हो तो ऐसी स्थिति में वर पक्ष से जेठ साली के लिए अनिवार्य रूप से कपड़ा देना पड़ता है। मुण्डा समाज में इन रस्म को ''गाँडिको ताड़ोम'' कहा जाता है। उसी तरह से शादी के बाद पति के बड़े भाई, जो भैंसुर होता है वधू के लिए घूँघट साड़ी प्रदान करने के बाद भैसुर से छुआना बिल्कुल मना है। इस प्रकार से मुण्डा स्त्रियों में सिर पर घूँघट डालने का भी रिवाज है। बड़े बुजुर्ग तथा गुरुजनों के सामने वे बालों को खुला नहीं छोड़ती हैं। बुजुर्ग के सामने सिर पर घूँघट न डालना तथा केश को खुला छोड़ने का मतलब है उनका अनादर करना।

परिवार : मुण्डाओं का परिवार पितृसत्तात्मक है। सन्तानों में पिता का गोत्र चलता है। एक परिवार में साधारणतः माता–पिता और उनकी अविवाहित सन्तानें होती हैं। मुण्डाओं में दो तरह के परिवार हुआ करते हैं – 1. संयुक्त परिवार और 2. एकाकी परिवार। संयुक्त परिवार में माता–पिता के अतिरिक्त दादा–दादी, पोता–पोती, भाई–बहन आदि होते हैं। किन्तु एकाकी परिवार में सिर्फ माता–पिता और उनकी सन्तानें हुआ करती हैं। पुरातन समाज में संयुक्त परिवार की ही महत्ता अधिक थी जहाँ परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति सामूहिक रूप से की जाती थी। किन्तु वर्तमान मुण्डा समाज में अधिकांशतः एकाकी परिवार ही देखने को मिलता है। चूँकि जनसंख्या की वृद्धि के साथ–साथ लोगों की आवश्यकताएँ भी बढ़ती गयीं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति सामूहिक रूप से न हो पाने के कारण विवाह होने के बाद पति–पत्नी, माता–पिता को छोड़कर अलग परिवार बसाने लगते हैं। फलतः भाई–भाई में जमीन का बँटवारा भी हो जाता है। परिवार में जो बड़े बुजुर्ग व्यक्ति होते हैं उसे परिवार का मुखिया के रूप में माना जाता हैं। परिवार इनके नियंत्रण में चलता है। वह अपने परिवार के सदस्यों के हित में हमेशा सोचता है। बावजूद एकाकी परिवार में विभक्त होने पर उनकी अवहेलना की संभावना रहती है जो उनके लिए कष्टदायक होता है।

मुण्डा परिवार में पिता का अधिकार सर्वोपरि हैं। स्त्रियाँ सम्पत्ति की उत्तराधिकारी नहीं होतीं, फिर भी उन्हें पोषण तथा वैवाहिक खर्च हेतु पिता के उत्तराधिकारी से लेने का हक है। मुण्डा स्त्रियाँ पारिवारिक अर्थव्यवस्था में हाथ बँटाती हैं। वे घरेलू कामों के अतिरिक्त खेत–खलिहान में काम करती हैं। खाना पकाना, रोपा रोपना, चटाई बुनना, झाड़ू लगाना, पत्तल बनाना, फसल काटना, बच्चों की देखभाल करना इत्यादि काम उनके ऊपर रहता है। खासकर बच्चों के पालन–पोषण करने में उनका मुख्य स्थान है। फिर भी मुण्डा परिवार में स्त्रियों द्वारा किए गये कार्यों का कोई मूल्यांकन नहीं है। यद्यपि पति के समक्ष स्त्री का स्थान निम्न है, किन्तु परिवार चलाने में उनका स्थान निम्न नहीं है। परिवार चलाने के लिए पुरुष, स्त्री, बच्चों आदि में श्रम विभाजन होता है। पुरुष का घर के बाहर का काम जैसे हल चलाना, खेत की रखवाली करना, छप्पर छानना इत्यादि होता है जबकि मुण्डा स्त्रियों को हल चलाना तथा छप्पर छानना बिल्कुल मना है। यहाँ तक कि उन्हें हल छूना भी

मना है। बच्चों को घर का छोटा–छोटा काम दिया जाता है। जैसे बैल चराना, नवजात शिशु को खेलाना, मुर्गी भगाना इत्यादि। बच्चे स्कूल जाने के पूर्व घर में ही अपने माता–पिता से प्रारंभिक शिक्षा पाते हैं। अतः माता–पिता उनके प्रारम्भिक गुरु होते हैं। माता–पिता से वे अपने समाज, संस्कृति, भाषा सम्बन्धी ज्ञान हासिल कर लेते हैं। इसके अलावा वे आर्थिक उद्योग भी सीख लेते हैं। इस प्रकार से मुण्डा समाज में परिवार एक महत्त्वपूर्ण इकाई है।

जीवन चक्र : मुण्डा समाज के किसी व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त कई संस्कारों से गुजरना पड़ता है। संस्कारों में मुख्य है – जन्म संस्कार, छठी संस्कार, नामकरण, कर्ण छेदन, विवाह संस्कार तथा मरण संस्कार।

जन्म संस्कार : समाज में शादी के बाद बच्चे का जन्म लेना आनन्द का विषय है। जब नव–विवाहिता स्त्री शुरू में गर्भधारण करती है तो उनके नैहर से सम्बन्धियों को बुलाया जाता है। जब वे आते हैं तो ग्राम देवता (हातु बोंगा), पहाड़ देवता (बुरू बोंगा) वरुण देवता (इकिर बोंगा) तथा पूर्वजों के नाम से गर्भ की रक्षा के लिए पूजा–पाठ करते हैं और वे अपनी गर्भवती बेटी के गले में एक कच्चा धागा बाँध देते हैं। इसे ''सुतम तोल'' कहा जाता है। इसके बाद जब बच्चा जन्म लेता है, गाँव घर में छूत मनाया जाता है। यह अवधि 6 दिनों तक की होती है। 6 दिन में बच्चे की छठी होती है। छठी होते ही गाँव तथा घर में छूत मिट जाता है। छूत की अवधि में यदि किसी तरह का पूजा–पाठ, पर्व–त्यौहार इत्यादि निश्चित किया गया हो तो उसे टालकर दूसरे दिन सम्पन्न किया जाता है। जन्म से लेकर छठी तक दाई की सेवा प्राप्त होती है। दाई निम्न जाति की होती है। वह प्रसव कराती है। नवजात शिशु की ''नाल'' को यदि बच्चा हो तो तीर से तथा बच्ची हो तो ब्लेड से काटकर दरवाजे के सामने छत के नीचे गाड़ दिया जाता है। छठी होने तक माँ और बच्चे की देखभाल दाई करती है।

छठी संस्कार : नवजात शिशु की छठी जन्म के बाद 6 दिनों पर होती है। यह भी खुशी का दिन होता है। इस अवसर पर इष्ट कुटुम्ब को बुलाया जाता है। दाई माँ और नवजात शिशु को स्नान कराती है। नाई बच्चे के नाखून तथा बाल काटता है। सभी ईष्ट–कुटुम्ब अपने नाखून एवं बाल नाई से कटाते हैं। इस प्रकार से बच्चे को पवित्र किया जाता है और उसे वस्त्रादि का दान देते हुए

सिर पर तेल मालिश करते हैं। तेल मालिश के समय बच्चे को दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया जाता है। सभी खुशी से नाचते–गाते हैं। छठी के दिन स्त्रियाँ स्नान करती हैं। समस्त घर को धोया जाता है। घर के अन्दर ''आदिंग'' में पितर की पूजा की जाती हैं। उसके बाद पड़ोसीगण तथा ईष्ट–कुटुम्ब मिलकर खान–पान करते हैं। इसका अन्त ''नरताइली'' छठी की हँड़िया पीकर करते हैं। किसी–किसी का तो नामकरण भी इसी दिन हो जाता है।

नामकरण : सामान्यतः छठी के बाद दूसरे दिन नामकरण होता है। वैसे तो जिस दिन बच्चे का जन्म हुआ उसी दिन के नाम से उसका नाम भी पड़ जाता है। और यदि बच्चा किसी पर्व त्यौहार के दिन जन्म लेता है तो उसे पर्व त्यौहार के नाम से उसका नाम रखा जाता है। जैसे सोमवार को जन्म लेने पर सोमा, सानिका, सागर आदि नाम रखा जाता है। जबकि करम, बुरू, सोहराई आदि त्यौहार में जन्म लेने पर दिन का नाम छोड़कर त्यौहार का ही नाम रखा जाता है। लेकिन इसके अतिरिक्त उनके दादा–दादी, नाना–नानी या अन्य सम्बंधियों के नाम पर नामकरण किया जाता है। इस तरह के नाम को ''साकी नुतुम'' कहते हैं। अतः बच्चे का नामकरण दो प्रकार से होता है। एक जन्म का जिसे ''जोनोम नुतुम'' कहते हैं और दूसरा ''साकी नुतुम''। ''साकी'' का अर्थ है मिता।

बच्चे की ''साकी'' का समय मनोरंजक होता है। एक थाल में पानी रखा जाता है। उसमें ''सिंगबोंगा'' के नाम पर दुबला (दूब) घास छोड़ दिया जाता है। उस पर चावल का एक दाना ''सिंगबोंगा'' के नाम पर, दूसरा दाना बच्चे के नाम पर और तीसरा दाना इंगित व्यक्ति के नाम पर छोड़ा जाता है। सबसे पहले घर के दादा–दादी को प्राथमिकता दी जाती है। उसके बाद नाना–नानी का स्थान आता है। यदि दादा–दादी के नाम पर छोड़े गये चावल का दाना बच्चे के चावल के दाने से मिल जाता है तो उन्हीं के नाम पर बच्चे का नाम रखा जाता है। इस तरह से जब तक ये दोनों चावल एक दूसरे से नहीं मिलते तब तक बारी–बारी से इंगित व्यक्तियों के नाम से चावल दाना छोड़ते जाना पड़ता है और जब दोनों चावल एक दूसरे को पकड़ता है तो यह माना जाता है कि बच्चे ने अमुक आदमी को पसन्द किया है। इसलिए उन्हीं के नाम से नामकरण कर दिया जाता है।

कर्ण-छेदन : मुण्डाओं में कर्ण–छेदन भी जीवन का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। बिना कर्ण–छेदन के शादी वर्जित होती है। इसलिए बच्चे का कर्ण–छेदन किया जाना अत्यावश्यक है। कर्ण–छेदन के बाद ही बच्चे को सामाजिक प्राणी के रूप में मान्यता दी जाती है। मुण्डा में इस संस्कार को ''तुकुई लुतुर'' कहते हैं। यह बच्चे के जन्म से तीन वर्ष के अन्दर मनाया जाता है। कहीं–कहीं इसके बाद भी किया जाता है। इस अवसर पर ''साकी'' वाले व्यक्ति का प्रमुख पाठ रहता है।

कर्ण–छेदन के दिन आँगन में गुड़ी का मड़वा लिखा जाता है। उस पर लोटे में पानी और आम की टहनी रखा जाता है। लोटा रखने के लिए धान का होना अनिवार्य है। मड़वा में बच्चे को गोदी में लेकर उनका ''साकी'' काठ के पीड़हा पर बैठ जाता है। गाँव के दो व्यक्ति बच्चे के दोनों कान को ''कणासी'' से एक ही बार में एक साथ भेद देते हैं। कणासी ताँबा या रूपा का बना होता है। इसे गाँव का लोहरा विधिवत उपवास कर तैयार करता है। इसके लिए उसे एक पौवा चावल तथा सवा रुपया पैसा दिया जाता है।

यदि कोई बच्चा बिना कर्णछेदन से मर जाता है तो उसे अलग दफनाया जाता है। उसी प्रकार से शादी के पूर्व कर्णछेदन न होने पर यह संस्कार शादी के समय भी निभाना पड़ता है। अन्यथा शादी नहीं होगी।

विवाह संस्कार : मुण्डा समाज में विवाह बहिर्गोत्रीय होता है। मुण्डा के बीच कई प्रकार के विवाह प्रचलित हैं। किन्तु एक पत्नी विवाह नियम के अनुकूल है। उसके बाद ही बहुपत्नीत्व का स्थान दिया जाता है। शादी में मामा की मान्यता अधिक है।

शादी ठीक करने के लिए एक अगुवा होता है जिसे ''दुतमदार'' कहा जाता है। वह पक्ष लड़का पक्ष से लड़की के यहाँ जाता है। अर्थात् मुण्डा समाज में शादी के लिए लड़का पक्ष से लड़की को ढूंढा जाता है। समाज में लड़की का मूल्य है, लड़का का नहीं। इसलिए लड़का पक्ष को बधू मूल्य के रूप में ''डालीटाका'' देना पड़ता है। वधूमूल्य सवा रुपये से लेकर पाँच रुपये तक चलता है। इसके अलावा लड़के को कुछ कपड़े देने पड़ते हैं। कपड़े में कन्या साड़ी, सारा, धोती, एँगा बागे (माय छाड़ा) जिया साड़ी और लगन साड़ी अनिवार्य रूप से देना पड़ता है। इसके अलावा जो भी देने के लिए तय किया जाएगा, दिया जाता है।

जब शादी के लिए लड़की मिल जाती है तो सामाजिक तौर पर लड़का–लड़की को देखा जाता है। पहले लड़का पक्ष वाले लड़की को देखने जाते हैं। उसके बाद लड़की पक्ष वाले लड़का देखते हैं। इस क्रम में ज्योतिष विद्या के आधार पर दृश्य–ज्ञान और श्रव्य–ज्ञान हासिल किया जाता है। यदि रास्ते में किसी तरह के पशु–पक्षी दिखाई पड़ते हों या कोई प्राकृतिक घटना हो तो इसे देखने से शुभ–अशुभ माना जाता है। इसे दृश्य ज्ञान कहा जाता है। उसी तरह से किसी प्रकार की आहट सुनाई पड़ना, श्रव्य ज्ञान कहा गया है। दोनों पक्षों से देखे गये या सुने गये ऐसे शुभ–अशुभ लक्षणों की छानबीन करने के लिए एक स्थानीय ज्योतिषी को आमंत्रित किया जाता है। वह छानबीन करके यह बताता है कि शादी सम्पन्न करना उचित होगा या अनुचित यदि अनुचित होगा तो यह कार्यक्रम यहीं समाप्त किया जाता है। और, यदि उचित होता हो तो कार्यक्रम को आगे बढ़ाया जाता है। शादी का दिन निश्चित किया जाता है। उसी आधार पर लगन बाँधा जाता है। लड़के वाले लड़की से लगन ले आते हैं। लगन तीन दिन, सात दिन तथा एक दिन का भी दिया जाता है। यह अपनी सुविधा के अनुसार होता है।

शादी में लड़का जब घर से बारात के लिए निकलता है तो उसे आम मुकुल खाना पड़ता है। इसे ''उलिसाकी'' कहा जाता है अर्थात् प्रकृति को साक्षी मानकर बारात प्रस्थान किया जाता है। उलिसाकी खाते समय माँ की गोद में लड़का बैठता है। माँ प्रश्न करती है कि वह कहाँ जा रहा है, क्यों जा रहा है और कब लौटेगा? इसके जवाब में लड़का प्रकृति को साक्षी मानकर यह कहता है कि वह शादी के लिए लड़की के यहाँ बारात लेकर प्रस्थान कर रहा है और जब तक शादी नहीं होगी वह घर वापस नहीं लौटेगा। इस प्रतिज्ञा को अटल माना जाता है। और यदि किसी कारणवश शादी नहीं हुई तो उसे घर लौटना मना है। ऐसी स्थिति में मजबूरन तुरन्त कहीं न कहीं किसी लड़की को शादी के लिए ठीक किया जाता है। और उसे शादी करके ही घर वापस लौटना पड़ता है। इस तरह के विवाह को 'शिकारी विवाह' कहा जाता है।

शादी होने के बाद लड़की की विदाई होती है। इस वक्त लड़की भी अपनी माँ की गोद में बैठकर आम मुकुल या उलिसाकी खाती है। माँ के यह पूछने पर कि वह कहाँ जा रही है तो लड़की जवाब देती है कि वह

शादी होकर ससुराल जा रही है। इसका मतलब यह नहीं है कि वह अपने देशावली, बुरु बोंगा इत्यादि को भुला जाएगी। वह मरणोपरान्त भी उनके साथ रहेगी। यही कारण है कि मरने के बाद मुण्डा स्त्रियों का अस्थि कलश अपने गाँव में पहुँचा दिया जाता है और वहीं उसका अस्थि विसर्जन किया जाता है।

मुण्डाओं की शादी मड़वा में होती है। शादी पहान कराता है। इनमें सिन्दूर–दान होता है। कहीं–कहीं पहान द्वारा शादी सम्पन्न न होकर ब्राह्मणों से करायी जाती है। विशेषकर तमाड़ क्षेत्र के मुण्डा लोग ब्राह्मण से पूजा कराते हैं। इस समय नाई की भी सेवा प्राप्त होती है। समाज में विधवा विवाह सगाई के रूप में चलता है। देवर विवाह भी होता है, लेकिन समाज में इसकी मान्यता कम है।

मरण संस्कार : जन्म के बाद मरण निश्चित है। मुण्डा समाज में जब कोई मरता है तो उसे जलाया तथा दफनाया जाता है। किन्तु दफनाने की प्रथा अधिक प्रचलित है। शव को दफनाने के लिए एक स्थान निश्चित होता है जिसे ''ससान'' कहा जाता है। मरने के दस दिन में दसकर्म होता है और ग्यारह दिन में श्राद्ध होता है। इस अवसर पर नौकेश होता है। इसमें नाई की सेवा प्राप्त है। पिण्ड दान के समय पाहन अथवा ब्राह्मण पूजा करते हैं। दसकर्म के दिन मृतात्मा को घर बुलाया जाता है। उसे पितरों के साथ घर के अन्दर (आदिंग) में पूजा पाठ करके मिला दिया जाता है। इस क्रिया को 'पितर मिलौनी' कहा जाता है।

इसी क्रम में अस्थिकलश का विसर्जन किया जाता है। इसे कहीं नदी–नाला या पहाड़–पर्वत में विसर्जित नहीं किया जाता है, बल्कि एक निश्चित स्थान में गाड़ दिया जाता है और उसके ऊपर विधिवत एक पत्थर रख दिया जाता है। ऐसे रखे पत्थर को ''ससानदिरी'' कहा जाता है। दूसरे शब्दों में इसे ''हड़गड़ी'' उक ससान कहा जाता है। हड़गड़ी उक ससान हरेक मुण्डा गाँव में मिलता है। यह विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ होता है। हड़गड़ी उक ससान अलग–अलग गोत्र का अलग–अलग होता है। एक गोत्र वाले के साथ दूसरे गोत्र वाले की ''हड़गड़ी'' उक ससान नहीं होता है। यह मुण्डाओं के अस्तित्व का मूल स्तम्भ है। जो मुण्डा जिस गाँव का मूल वाशिन्दा है उसकी ''हड़गड़ी'' उक ससान वहीं हुआ करती है।

चेचक तथा महामारी से मरने वालों को अलग दफनाया या जलाया जाता है। साँप के काटने तथा शेर द्वारा मारे जाने पर उसे भी अलग दफनाया जाता है और उसके नाम पर गाँव के सीमा क्षेत्र पर एक पत्थर गाड़ दिया जाता है। गर्भवती महिलाओं के मरने पर भी अलग गाड़ा जाता है। दूध पीने वाले बच्चों के मरने पर उन्हें किसी महुआ तथा वट पेड़ के नीचे गाड़ दिया जाता है। इस पर विश्वास है कि बच्चे को मरने के बाद भी उसे दूध मिलता रहेगा। शव को उत्तर–दक्षिण लम्बा करके गाड़ा जाता है। शव–यात्रा में समाज के स्त्री–पुरुष सभी जाते हैं। लेकिन तमाड़ क्षेत्र के मुण्डा लोगों की शव–यात्रा में सिर्फ पुरुष ही शामिल होते हैं। चूंकी इनमें स्त्रियों के सती होने का भय है।

तृतीय अध्याय

जीने की कला

मुण्डा जनजाति की आर्थिक स्थिति को समझने के लिए उनके जीने की कला को समझना आवश्यक हो जाता है। मुण्डा जनजाति के खाद्य पदार्थ एवं पाक प्रणाली ऐसे हैं कि पोषण पदार्थ अधिक मिलते हैं। जिनके फलस्वरूप उनके बीच बीमारियों का अभाव रहता है। परन्तु सांस्कृतिक सम्पर्क के कारण उनके भोजन की सामग्रियों तथा पकाने के ढंग में बहुत परिवर्तन एवं परिवर्द्धन हो गया है।

मुण्डा जनजाति के लोग जंगल–झाड़, पहाड़–पर्वत तथा नदी–नाला के बीच अवस्थित गाँव या टोलों में निवास करते हैं। जंगल से उन्हें कन्द–मूल, साग–पात मिलते हैं। उसे खाकर दो शाम व्यतीत कर लेते हैं। कुछ कन्द ऐसे हैं जिन्हें कच्चा भी खाया जा सकता है तथा कुछ तो पकाकर खाया जाता है। कन्द–मूल की खोज में घर के सभी सदस्य निकल पड़ते हैं। समय–समय पर वे शिकार करते हैं। शिकार में जो भी पशु–पक्षी मिलते हैं उन्हें आहार के रूप में खाते हैं। शिकार के लिए वे रस्सी का जाल बनाते हैं। तीर–धनुष उनका जीवन साथी है। वे नदी में मछली पकड़ते हैं। मछली पकड़ने का सामान वे अपने से बनाते हैं। इन सामानों में जाल, झिमरी, कुरुआ, कुमनी, डुण्टी आदि होते हैं। वे मछली के अलावा घोंघा, केकड़ा इत्यादि पका कर खाते हैं। वे जो कुछ भी पकाते हैं उनमें मिर्च–मसाला कम डालते हैं। यदि उनके घर में नमक है तो वही काफी होता है। सब्जी पकाते समय तेल कम मात्रा में डालते हैं। सब्जी में मुंगा (सहजन) साग अति प्रिय है। यह साग खाने से बदहजमी दूर हो जाती है। इसी तरह से फुटकल का साग पेट के लिए फायदेमंद होता है। ऐसे तो वे इस साग को खाते ही हैं, किन्तु विशेषकर पेचिस तथा पतला दस्त होने पर इसे दवा के रूप में प्रयोग करते हैं। उसे बाजार में बेचकर कपड़े – लत्ते, नमक–तेल इत्यादि खरीदते हैं।

मुण्डा जनजाति का मुख्य पेशा कृषि है। कृषि से जो समय बचता है उसे मजदूरी में व्यतीत करते हैं। मुख्य रूप से वे धान की खेती करते हैं। इसके अलावा मडुआ, गोंदली गंगई, जौ, बाजरा आदि की खेती होती है। यदा–कदा

मकई और गेहूँ की खेती भी कर लेते हैं। तेलहन में सरसों, सुरगुजा, तीसी आदि उपजाते हैं। दलहन में अरहर, चना, खेसारी, उड़द आदि होता है।

खेती के तरीके इनके पुराने हैं। कृषि औजार में हल, कुदाल, खोन्ती, जुंआट इत्यादि हैं। हल–जुंआट, बैल बांधने की रस्सी बनाना वे जानते हैं। हल लकड़ी का बनाते हैं। ट्रैक्टर से वे खेती नहीं करते। क्योंकि उनका खेत पथरीला ओर सीढ़ीनुमा होता है। खेत में गोबर का खाद डाला करते हैं। किन्तु अन्य लोगों को देखकर सल्फेट आदि का भी इस्तेमाल करते हैं।

सब्जी के लिए जंगली साग–पात ही उनके लिए काफी होता है। किन्तु दूसरों के सम्पर्क में आकर सब्जी की खेती करना भी सीख रहे हैं और छिट–पुट अपने खाने भर के लिए सब्जी उपजा लेते हैं। लेकिन खेती में मुण्डा लोग विशेष ध्यान नहीं देते हैं। चूँकि उनके बीच सिंचाई की सुविधा नहीं है। इसलिए मौसम के अनुसार अपने बारी–बगान में सब्जी लगा लेते हैं। ऐसी सब्जियों में सेम, टमाटर, बैंगन आदि मुख्य हैं। जहाँ सिंचाई की सुविधा है वहाँ आलू, गोभी, पालक इत्यादि उपजा लेते हैं।

अपने रहने के लिए वे कच्चा मकान बनाते हैं। इसकी दीवार मिट्टी की बनी होती है और छप्पर खपरैल तथा फूस का होता है। यह एक या दो कमरे का होता है। उसके चारों ओर ढाबा उतारा रहता है। बीच का कमरा अनाज रखने के लिए होता है जिसमें कुल देवता ''पितरकोचा'' स्थापित किये जाते हैं। दूसरा कमरा रसोई तथा शयन कक्ष में प्रयुक्त होता है। ढाबा में मवेशियों को रखा जाता है।

मुण्डाओं को पशु–पालन का ज्ञान है। पशुओं में गाय–बैल, भेड़–बकरी आदि पालते हैं। वे मुर्गी पालन भी करते हैं। क्योंकि हर पूजा–पाठ में उनकी बलि चढ़ाने में काम आते हैं। समय–समय पर उन्हें बेच कर आर्थिक लाभ कर लेते हैं।

इतना होने के बाबजूद इनकी आर्थिक स्थिति काफी दयनीय है। जब किसी तरह की मुसीबत आती है तो वे महाजनों से पैसा कर्ज लेते हैं। समय पर कर्ज न चुका पाने के कारण वे जमीन ही बेच देते हैं। इस तरह से महाजनों के चंगुल में फंस जाते हैं और गरीबी बढ़ जाती हैं। किसी समय

मुण्डा लोगों की जमींदारी थी। किन्तु आज उनकी जमींदारी दूसरों के हाथ में चली गयी और वे उनकी मजदूरी कर जीवन जी रहे हैं।

मुण्डा पुरुष सबेरे उठते हैं और मुँह–हाथ धोकर बासी खाना खाते हैं। बासी भात मुण्डाओं का मुख्य भोजन है। बासी भात खाकर वे खेत में काम करने के लिए जाते हैं। स्त्रियाँ दोपहर का भोजन खेत में ही ले जाती हैं। देर तक काम करने के बाद वे घर आते हैं और सूर्यास्त होते ही भोजन करके सो जाते हैं।

स्त्रियाँ सबेरे पुरुषों से पहले उठती हैं। डाड़ी या चुँआ से पानी लाती हैं। परिवार के सभी सदस्यों के लिए खाना पकाती हैं। घर में बच्चों को खाना खिलाकर पुरुषों के लिए खेत में खाना पहुँचाने जाती हैं, सूर्यास्त होने पर वे घर आते हैं और दोनों पति–पत्नी आपस में प्रेमालाप करने लगते हैं।

चतुर्थ अध्याय

धार्मिक स्थिति

मुण्डा जनजाति के लोग प्रकृति के पुजारी होते हैं। इनके पूजा का मुख्य उद्देश्य देवी–देवताओं को खुश रखना होता है जिससे कि उनका अनहित न हो। मुण्डाओं का सर्वश्रेष्ठ और सर्वशक्तिमान देवता ''सिंगबोंगा'' है जो सर्वव्यापी और निराकार है। इसका कोई आकार–प्रकार नहीं है। वह हवा रूपी है। सिंगबोंगा का अर्थ है सूर्य देवता। लेकिन मुण्डा लोग इसे मानने को तैयार नहीं हैं। उनका विश्वास है कि सिंगबोंगा अदृश्यमान है। वह न तो सूर्य है, न सूर्यलोक में रहता है। उसका न कोई रंग है, न रूप है। वह सबके लिए है। सबका लेखा–जोखा रखता है। जब वह किसी का नुकसान करता है तो बुरे कामों के लिए सजा देना होता है। मुण्डाओं का विश्वास है कि पहले ''सिंगबोंगा'' दिखाई पड़ते थे। उस समय लोग पवित्र जीवन व्यतीत करते थे। लेकिन अब लोग पापी हो गये हैं। इसलिए विश्वास के साथ मुण्डा लोग इसे सफेद मुर्गे की बलि चढ़ाकर पूजते हैं। सफेद पवित्रता का सूचक है।

मुण्डा जनजाति के लोग जीववाद पर विश्वास करते हैं। शरत चन्द्र राय का कहना है कि मुण्डाओं के धर्म को जीववाद कहना धोखा नहीं तो अपूर्ण अवश्य है। मुण्डा जब किसी प्रकार को अनाज ग्रहण करता है तो वह ''सिंगबोंगा'' के नाम पर दो–तीन दाना अवश्य गिराता है। रोग–दुःख के समय जब पूजा–पाठ करते हैं तो सबसे पहले ''सिंगबोंगा'' का नाम लिया जाता है। इतना ही नहीं पूरी सृष्टि को ''सिंगबोंगा'' की ही देन माना जाता है।

''सिंगबोंगा के बाद गाँव के देवी–देवता आते हैं, जो हातुबोंगा; देशवाली, ओड़ाः बोंगा आदि नाम से पुकारे जाते हैं। देशवाली गाँव की सबसे बड़ी देवी मानी जाती है। इसके बाद कुल देवता का स्थान है जो ओड़ाः बोंगा के नाम से जाना जाता है। यह घर के अन्दर (आदिंग) में अवस्थित होता है। प्रत्येक सामाजिक कार्य एवं धार्मिक अनुष्ठान में इनका आशीष लिया जाता है। पहाड़ में पहाड़ देवता होता है। इसे बुरू बोंगा के नाम से जानते हैं। बुरू बोंगा का काम है जंगली जानवरों से मुण्डा को बचाना। यदि किसी मुण्डा के

मवेशी को शेर पकड़ लेता है तो यही समझा जाता है कि बुरू बोंगा नाराज हो गया है। इसी विश्वास पर बुरू बोंगा के नाम से पूजा–पाठ सम्पन्न कर दिया जाता है। इन देवताओं के अलावा अहितकर प्रेतात्माएं भी होती हैं। जैसे–चुरीन, चण्डी, हंकार, नाशन इत्यादि। अन्य प्राकृतिक देवता में इकिर बोंगा, नाम बोंगा आदि होते हैं। उदार प्रेत को मनीता बोंगा ओर अनुदार प्रेत को बनिता बोंगा कहा जाता है।

मुण्डा जनजाति गोत्र चिह्न पर विश्वास करते हैं। यह इनका सामाजिक आधार भी है। इनका गोत्र पशु–पक्षी एवं पेड़–पौधों के नाम पर होता है। वे अपने गोत्र के जीव–जन्तुओं, पशु–पक्षियों की रक्षा करते हैं। वे अपने गोत्र चिह्न की पूजा करते हैं। शादी संबंध स्थापित करते समय गोत्र का परिचय देना आवश्यक हो जाता है। क्योंकि एक गोत्र में शादी वर्जित है। यदि दुर्योग से शादी हो भी जाती है तो उसे गोत्र वध मानकर लड़का–लड़की दोनों को समाज बाहर की सजा दी जाती है और उनसे उत्पन्न बच्चे को अवैध समझा जाता हैं। उनका समाज में कोई स्थान नहीं होता है।

मुण्डाओं का कुछ वर्जित कर्म भी होता है। सरहुल मनाने के पहले गोबर खाद काटना तथा खेती का काम करना मना है। उसी तरह से नया फल–फूल खाना भी वर्जित होता है। मुण्डा स्त्रियों को हल जोतना तथा छप्पर छारना मना है। सरना स्थल में महिलाएँ पूजा नहीं करतीं।

मुण्डा लोग मौसम के अनुसार भिन्न–भिन्न प्रकार के त्यौहार मनाते हैं। सरहुल इनका मुख्य त्यौहार है। मुण्डा लोग इसे ''बा पर्व'' कहते हैं। यह पर्व वसन्त ऋतु में मनाया जाता है। इस अवसर पर सखुआ फूल को सरना में रखकर पूजा की जाती है। यह तीन दिन का पर्व है। एक दिन उपवास किया जाता है, दूसरे दिन हाईकाड़ाकम और तीसरे दिन ''बा'' पूजा किया जाता है। ''बा'' के दिन बड़ी धूमधाम से गाँव के अखाड़ा में नाच–गान होता है। सबसे पहले सरना में पहान पूजा करते हैं। पूजा के समय हँड़िया चढ़ाया जाता है और मुर्गी की बलि दी जाती है।

उसके बाद करमा मनाया जाता हैं यह त्यौहार भादो मास (सितम्बर) में होता है। करम एकादशी में इसका व्रत करके जंगल से करम डाली काट कर अखाड़ा में या आँगन में गाड़ा जाता है। इस अवसर पर कर्मा और धर्मा

की कहानी कही जाती है। उसकी पूजा–अर्चना करके नाच–गान शुरु हो जाता है। मुण्डाओं में करम मनाने के दो तरीके हैं। एक तो व्यक्तिगत रूप से आँगन में गाड़कर, दूसरा सामूहिक रूप से अखाड़ा में गाड़कर मनाते हैं। तीसरा है सोहराई पर्व यह मवेशियों का पर्व है। सोहराई नवम्बर के महीने में होता है। इस अवसर पर गोशाला में गोरेयाबोंगा की पूजा की जाती। गोरेया महुआ डाली का बनाया जाता है। सोहराई के दिन मवेशियों को नहलाया जाता है। उसे घास के अलावा खाना भी खिलाया जाता है। धान तथा फूल का माला बनाकर मवेशियों को पहनायी जाती है। रंग–बिरंगे टीके लगाते हैं। इस तरह से उसका श्रृंगार करके ढोल–नगाड़ा बजा कर गाँव के चारों ओर दौड़ा दिया जाता है। उसके बाद घर में खान–पान चलता है।

सोहराई के बाद बुरू पूजा होती है। बुरू दिसम्बर माह में मनाया जाता है। इस समय जब पहान पूजा करने के लिए सरना में जाते हैं तो शिव–पार्वती के लिंग को सम्बोधन कर लोग जय घोष करते हैं। कहते हैं कि ऐसा करने पर पहाड़ देवता (बुरू बोंगा) खुश होते हैं और पूजा में सफलता मिलती है।

इस तरह से इन मुख्य त्यौहारों के अलावा और कई त्यौहार हैं जो मुण्डा लोग अनिवार्य रूप से समय–समय पर मनाते हैं। जैसे हेरोः धानबुनी के समय। जोमनवा–नये अनाज ग्रहण करने क समय, रोआपुना – धान की रोपनी शुरु करने के समय विशिष्ट रूप से मनाते हैं।

तमाड़ क्षेत्र में टूसू पर्व बड़ी धूमधाम से मुण्डा मनाते हैं। जबकि यह पर्व मुण्डाओं का नहीं है। दूसरों के प्रभाव से मुण्डाओं में यह एक मुख्य त्यौहार के रूप में मनाया जाता है। यह पर्व मकर संक्रांन्ति के अवसर पर होता है। हिन्दुओं के प्रभाव में आकर मुण्डा लोग हिन्दू देवी–देवताओं की भी पूजा–अर्चना करते हैं और साथ ही हिन्दू पर्व–त्यौहार में शामिल भी होते हैं। अपने देवताओं के अतिरिक्त काली–दुर्गा–पार्वती, राधा–कृष्ण इत्यादि को मानते हैं। उसी तरह से दशहरा, दीपावली, होली आदि त्यौहारों को मुण्डा लोग धूमधाम से मनाते हैं। इस अवसर पर वे मंदिरों में भी पूजा–पाठ करते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि अपने पारम्परिक धार्मिक विश्वास के अलावा राष्ट्रीय धर्मों पर भी उनका विश्वास है।

पंचम अध्याय

राजनैतिक स्थिति

मुण्डा गाँव में एक मालिक होता है। उसे ''हातु मुण्डा'' कहा जाता है। यही हातु पंचायत (ग्राम पंचायत) का मुखिया भी होता है। इस पंचायत में पहान तथा अन्य बुजुर्ग लोग रहते हैं। पंचायत में गाँव के आपसी झगड़ों का निपटारा किया जाता है। इस परंपरागत हातु पंचायत के लिए महिलाएं सदस्य नहीं होती। किन्तु पंचायत में उनके हित के लिए भी निर्णय लिया जाता है। गाँव में बहिर्विवाही नियमों का उल्लंघन करने वाले अपराधों की जाँच–पडताल इस पंचायत के द्वारा होती है। मार–पीट, खून–खतरा, लूट इत्यादि के अपराध की जाँच–पड़ताल भी इसी के माध्यम से की जाती है। गाँव की पंचायत उत्तराधिकारी के प्रश्न, घर की सम्पत्ति का बँटवारा और वैवाहिक संबंध–विच्छेद के विषयों पर भी विचार होता है। छोटे–छोटे अपराधों की सजा में जुर्माना किया जाता है। बड़े अपराधों के लिए सामाजिक बहिष्कार की सजा दी जाती है। यह सजा स्थायी अथवा अस्थायी दोनों हो सकती है। अस्थायी निष्कासन में व्यक्ति को निर्दोष की क्षतिपूर्ति तथा पंचों को भोज देकर समाज में पुनः शामिल किया जाता है।

हातु पंचायत के अलावा पड़हा पंचायत भी होती है। इसका सर्वोच्च अधिकारी पड़हा राजा होता है। भुईहरी पट्टी में पड़हा पंचायत के कानून अलग–अलग होते हैं। पड़हा राजा की मदद के लिए दीवान, कोटवार, पाण्डे, लाल, दरोगा इत्यादि सदस्य होते हैं। आजकल पड़हा पंचायत में मुकदमों का फैसला आधुनिक तरीके से दिया जाता है। पंचायत में मुद्दई और मुदालेह दोनों शपथ लेते हैं। वह कुछ धान, गाय का गोबर, मिट्टी का ढेला अपने सिर के ऊपर रखकर बोलता हैं धान अन्न का द्योतक है। गाय मवेशी का और मिट्टी जमीन का प्रतीक है। झूठी शपथ लेने से अन्न, मवेशी और भूमि की क्षति होगी। इसीलिए लोगों को शपथ खाने के नाम पर भय होता है और भरसक झूठ न बोलकर सच बोलने का प्रयास करते हैं।

किन्तु इन दिनों मुण्डा गाँव में सरकारी ग्राम पंचायत भी पाई जाती है। यह पंचायत मुण्डाओं के सामाजिक मामलों में भी हस्तक्षेप करती है।

इस प्रकार से धीरे–धीरे पंरपरागत ग्राम पंचायत गौण होती जा रही है और हर मामले में सरकारी अदालत के फैसले को अन्तिम माना जा रहा है। पंरमपरागत ग्राम पंचायत में जहां मुण्डा स्त्रियों को सदस्य बनने का अधिकार तक नहीं था वहाँ सरकारी पंचायत में वे मुखिया के लिए चुनाव भी लड़ सकती हैं और वर्तमान समय में कहीं–कहीं स्त्रियाँ भी पंचायत की मुखिया बन गई हैं। उसी तरह से सांसद और विधानसभा के सदस्य बनने के लिए चुनाव लड़ने का हक पुरुषों के बराबर स्त्रियों को भी है। अब मुण्डाओं की राजनैतिक स्थिति में सुधार होकर काफी नियमित हो गई है।

षष्ठम अध्याय

सामाजिक परिवर्तन

मुण्डा जनजाति के लोग जब तक बाहरी लोगों के सम्पर्क से दूर थे तब तक उनके बीच सामाजिक परिवर्तन का प्रश्न ही नहीं था। किन्तु अंग्रेजों के आने के बाद से अब तक इनके सम्पर्क में बहुत लोग आए और यह सम्पर्क दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है और इनके सम्पर्क में आने वाले लोगों में जमींदार, व्यापारी, महाजन, कल्याणकारी, धर्म परिवर्तक समाज सेवी, शासन संबंधी व्यक्ति तथा अन्य व्यक्ति भी आए। अन्य व्यक्तियों में जंगल के ठेकेदार, बगीचों के मैनेजर आदि आते हैं। इन लोगों ने मुण्डाओं के जीवन को बहुत प्रभावित किया है। उन्नत व्यक्तियों के समक्ष अपने को हीन समझने लगा और स्वाभाविक तौर पर संस्कृतीकरण होकर उनके रहन–सहन, आचार–व्यवहार तथा खान–पान में काफी परिवर्तन हो गया है। इस प्रकार से इनके परिवर्तन के निम्नलिखित कारण हैं:

सांस्कृतिक सम्पर्क :- भारत में अंग्रेजों के आने के पहले से भी मुण्डाओं का सम्पर्क हिन्दुओं के साथ रहा है। लेकिन अंग्रेजों के बाद से अन्य लोगों के साथ सम्पर्क का क्रम और बढ़ता गया। बाहरी संस्कृति के प्रभाव में आकर ये अपनी संस्कृति को निम्न समझने लगे और उन्हें हीनता का अनुभव होने लगा। ये हिन्दुओं और ईसाइयों को अपने से ऊँचा समझने लगे। फलतः बहुत से मुण्डाओं को अपनी संस्कृति को छोड़कर दबाब में लाकर तथा लालच देकर जबरदस्ती ईसाई बनाया गया। इसी तरह से उनकी संस्कृति का विघटन शुरू हुआ और इनके सोचने–विचारने तथा रहन–सहन में काफी परिवर्तन होने लगा।

दैनिक मजदूरी की खोज : मुण्डा जनजाति स्थायी रूप से गाँवों में निवास करती है। किन्तु उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी न रहने की वजह से दैनिक मजदूरी की खोज के लिए शहर की ओर निकल पड़ते हैं। इस क्रम में उनका बहुत से नये–नये लोगों से सम्पर्क हो जाता है। मजदूरी की खोज में मुण्डा स्त्रियाँ भी चली जाती हैं। जीविकोपार्जन के इस प्रयास में कुछ मुण्डाओं ने तो पेशों में विशेषीकरण कर लिया है और उनका जीवन स्तर समाज में कुछ अच्छा हो गया है।

मेले-बाजार : मुण्डा जनजातियाँ अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मेला तथा बाजार में जाती हैं। इन बाजारों में वे जंगल से इकट्ठा किये गये सामानों को बेचते हैं और उससे जो पैसा प्राप्त होता है वे दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ खरीद लेते हैं। इस क्रम में उनका सम्पर्क महाजनों तथा हिन्दू व्यापारियों से हो जाता है। चूँकि मुण्डा जनजातियों में शिक्षा की भी कमी है, इसलिए वे बाजार–मेले में खरीद–बिक्री के समय पैसे की लेन–देन में ठगा जाते हैं। इस तरह से वे अनावश्यक दूसरों द्वारा शोषित होते हैं। व्यापारी एवं महाजन लोग बाजार में कभी–कभी मुण्डा स्त्रियों के प्रति दुर्व्यवहार भी करते हैं और उनसे अनुचित संबंध भी स्थापित कर लेते हैं। मुण्डा स्त्रियाँ अभावग्रस्त तो होती ही हैं वे पैसे के लालच में इन व्यापारी एवं महाजनों के साथ चली भी जाती हैं और जीवन साथी के रूप में उनके साथ रह जाती हैं। ऐसी औरतों के माध्यम से व्यापारी वर्ग के लोग मुण्डा गाँव में बस जाते हैं और मुण्डा समाज को बिगाड़ने में बाज नहीं आते।

नौकरी : नौकरी पेशा के क्रम में मुण्डा जनजाति के कुछ लोग अपने गाँव छोड़कर खानों, चाय के बगीचों, मिलों, कल–कारखानों तथा विभिन्न प्रकार के सरकारी नौकरी में चले गये हैं, उनका जीवन स्तर ग्रामीण जीवन से भिन्न हो गया है। वे पुरानी सामाजिक परम्परा के नियमों को समयानूकूल परिवर्तन करने का प्रयास करते हैं।

इस तरह से यदि देखा जाय तो मुण्डाओं में सामाजिक परिवर्तन का यदि कोई कारण है तो बाहरी सम्पर्क ही विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सप्तम अध्याय

विकास कार्य

सरकार के द्वारा अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जातियों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाएँ चलायी जा रही हैं यथा – जवाहर रोजगार योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम (एन.आर.ई.पी.) ग्रामीण भूमिहीन नियोजन गारंटी योजना (आर.एल.ई.जी.पी.) ट्राइसेम योजना, नरेगा इत्यादि।

जवाहर रोजगार योजना पहले से केन्द्र चालित राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन नियोजन गारंटी योजना के स्थान पर नई योजना है। इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

1. ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी रेखा से नीचे रह रहे बेरोजगार लोगों के लिए अतिरिक्त रोजगार का सृजन करना।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले गरीब लोगों की आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से आर्थिक और सामाजिक आधारभूत सुविधाओं का सृजन करना।
3. ग्रामीण जीवन में गुणात्मक विकास करना।

रोजगार देने में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों को प्राथमिकता दी जाती है। नियोजन में महिलाओं की संख्या कम से कम 30 प्रतिशत होगी। ऐसी व्यवस्था है कि ''गरीबी रेखा से नीचे'' के हर परिवार में से कम से कम एक व्यक्ति को नियोजन मिल सके।

गाँव में रोजगार के साधन न होने के कारण आमतौर से ग्रामीण युवा वर्ग गाँव छोड़कर शहर चला जाता है। ऐसे युवक को शहरों में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए सरकार ने एक योजना लागू की है जिससे ग्रामीण युवा वर्ग इस योग्य हो जाए कि गाँव में ही अपना रोजगार शुरू कर सके। इस योजना को ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण (ट्राइसेम) कहते हैं। ट्राइसेम का उद्देश्य गाँव के गरीब युवकों को तकनीकी जानकारी एवं कुशलता देकर इस योग्य बनाना कि कृषि और उससे संबंधित धन्धों, उद्योगों, सेवाओं तथा व्यापार में अपना रोजगार कर सके।

इस योजना से युवकों को निम्नलिखित लाभ मिलता हैः

1. युवक–युवतियों को अपना रोजगार शुरू करने के लिए मुफ्त प्रशिक्षण मार्ग–दर्शन और कर्ज की सुविधा मिल जाती है।
2. कुटीर उद्योग एवं हस्त कला को बढ़ावा मिलता है।
3. गाँव के लोगों को जरूरत की चीज गाँव में ही मिल सकती है।
4. युवा वर्ग को रोजगार के लिए गाँव से बाहर नहीं जाना पड़ेगा।

प्रशिक्षित युवक–युवतियों को अपना रोजगार शुरु करने में अक्सर दिक्कतें आती हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि उचित तकनीकी की कमी, कच्चे माल न मिलने तथा बने हुए माल की खपत में असुविधा होती है।

हर राज्य में अनेक सार्वजनिक प्रतिष्ठान (कॉरपोरेशन, संघ तथा सरकारी संस्थाएँ) आदि होते हैं। राज्य सरकार यह निश्चित करती है कि इस प्रकार की समस्याओं के समाधान के लिए किसी संस्था को चुन लें। उस संस्था की यह जिम्मेदारी होती है कि वह अपने क्षेत्र में रोजगार संबंधी समस्याओं को समझे और उन्हें दूर करे।

सरकार द्वारा इस विषय में लिए गये एक नीतिगत निर्णय के अनुसार ऐसी योजनाओं के कार्यान्वयन में स्वैच्छिक संस्थाओं को भी प्रभावी ढंग से शामिल किया जा रहा है और जनोपयोगी छोटी–छोटी योजनाओं को इन संस्थाओं के माध्यम से लागू किया जा रहा है। इस तरह की स्वैच्छिक संस्थाओं में विकास भारती, रामकृष्ण मिशन विशेष उल्लेखनीय हैं।

रामकृष्ण मठ तथा मिशन द्वारा चलाये जा रहे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लक्षित जनसंख्या की आर्थिक उन्नति के अलावा मानव संसाधनों के विकास पर विशेष बल दिया जाता है, क्योंकि यह अनुभव किया जाता है कि जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाये बिना विकास एक झूठे स्वप्न की तरह होगा। शुरु किये गये कार्यों के परिणाम धीरे–धीरे अपनाये गये गाँवों में दिखाई पड़ने लगे हैं तथा समय के साथ दुःख और कष्ट के जीवन से उबर कर सुख और खुशियों का आनन्द मिल सकेगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम

- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम/योजना ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार को, जिसके इच्छुक वयस्क अकुशल मानव श्रम आधारित रोजगार की इच्छा रखते हों, एक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिन रोजगार की गारंटी देता है।
- इस अधिनियमय/योजनान्तर्गत किसी आवेदक को आवेदन प्राप्ति की तिथि से 15 दिनों के अन्दर रोजगार प्राप्त नहीं होने पर बेरोजगारी भत्ता देने का प्रावधान है। बेरोजगारी भत्ता वित्तीय वर्ष में 100 दिन के रोजगार को आधार मानकर पहले 30 दिनों के लिए दैनिक न्यूनतम मजदूरी दर का चौथाई देय होगा। रोजगार हेतु आवेदन।
- रोजगार गारंटी योजना के तहत प्रदान किये जाने वाले रोजगार आवेदक के वर्तमान निवास से 5 कि. मी. की परिधि में होना चाहिए। यह दूरी प्रखण्ड के कार्यक्षेत्र के अन्दर होगी। अगर उपरोक्त परिधि से बाहर रोजगार प्रदान किया जाता है तो न्यूनतम मजदूरी दर का अतिरिक्त 10% परिवहन व जीवन–यापन खर्च को सामंजित करने हेतु उपलब्ध कराना सुनिश्चित कराना होगा।
- मजदूरी का भुगतान साप्ताहिक होगा, परन्तु किसी भी परिस्थिति में 15 दिनों के अन्दर किया जाना सुनिश्चित करना क्रियान्वयन एजेंसी का दायित्व होगा। यदि मजदूर बैंक/डाकघर में खाता खुलवाते हैं तो बैंक या डाकघर के माध्यम से उनकी मजदूरी का भुगतान किया जाएगा। डाकघर में खाता खोलने पर एक मुश्त 15 रु. खाताधारी द्वारा जमा करने पर एक लाख रुपये का बीमा उक्त मजदूर का होगा।
- परिवार के सदस्यों द्वारा किये गये कार्यों की विवरणी रोजगार कार्ड पर दर्ज की जाएगी एवं मस्टर रोल पर मजदूरों के नाम के सामने रोजगार कार्ड संख्या व दिनों की संख्या दर्ज की जाएगी। मस्टर रोल का समय–समय पर सामाजिक अंकेक्षण भी कराया जाना आवश्यक होगा।
- योजनान्तर्गत रोजगार उपलब्ध कराए गए व्यक्ति के दुर्घनाग्रस्त होने पर मुफ्त चिकित्सा सुविधा इस योजना मद् से समुचित प्रावधान के अन्तर्गत

उपलब्ध करायी जाएगी। इस योजनान्तर्गत रोजगार प्राप्त व्यक्ति की कार्य के दौरान मृत्यु होने और स्थायी अपंगता की स्थिति में कार्यकारी एजेंसी द्वारा 25,000/– (पच्चीस हजार) अनुग्रह अनुदान उपलब्ध करायी जाएगी।

- स्वच्छ पेयजल, बच्चों एवं कामगारों के आराम के लिए शेड, आपातकालीन चिकित्सा हेतु First Aid Box आवश्यक दवाओं के साथ योजना स्थल पर उपलब्ध रहेगा। 0–6 वर्ष के पांच या अधिक बच्चों के माँ के साथ योजना स्थल पर उपलब्ध होने की स्थिति में बच्चों की देखभाल के लिए महिला की प्रतिनियुक्ति आवश्यक रूप से की जाएगी जिसे न्यूनतम मजदूरी दर का भुगतान किया जाएगा।

उपसंहार

उपयुर्क्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ''मुण्डा'' आस्ट्रालॉयड (आग्नेय) प्रजाति परिवार की एक विशिष्ट जनजाति है जो दक्षिण–पूर्व एशिया में केन्द्रित है। वहाँ से चलकर मुण्डा जनजाति के लोग भारववर्ष के उत्तर–पश्चिम भाग में अवस्थित पहाड़ी दर्रों तथा नदी–घाटियों में जा बसे। इस समय वे आखेट का जीवन व्यतीत करते थे। शिकार में जो मिला, उसे कन्द–मूल, साग–पात खाकर अपनी जीवन निर्वाह करते थे। शिकार में जो मिला, उसे आहार के रूप में खा जाया करते थे वे कबिले में रहा करते थे और बर्बरता का जीवन जीते थे। कालान्तर में इनका सम्पर्क आर्यों से होता है। आर्य लोग जब भारतवर्ष में आये तो व्यापारी के रूप में आये। वे खेती के तरीके जानते थे और इनकी अपनी समुन्नत संस्कृति भी थी। आर्यों के सम्पर्क में आने से मुण्डा लोग थोड़ा–बहुत खेती करना सीखे। जंगल काटकर खेती लायक जमीन बनाया। नदी–नाला, पहाड़–पर्वत को समतल करके उस पर वे खेती करने लगे। किन्तु आर्यों द्वारा उन्हें पूर्वी भारत की ओर खदेड़ दिया गया। ऐसी स्थिति में वे उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में जा बसे। वहाँ से बुन्देलखण्ड होते हुए मध्यभारत की ओर बढ़े रोहिलखण्ड, तथा रोहतासगढ़, अवध होते हुए झारखण्ड प्रान्त के छोटानागपुर में आये। इस प्रकार से छोटानागपुर के इस पठारी भू–भाग में मुण्डा जनजाति का आगमन

उत्तर–पश्चिम भारत से हुआ। कहा जाता है कि छोटानागपुर में सबसे पहले मुण्डाओं का ही आगमन हुआ। फलतः छोटानागपुर के प्राचीन इतिहास में मुण्डा समाज का ही नाम आता है।

देशान्तर गमन के क्रम में मुण्डा लोग जहाँ कहीं भी बसे हों, उन्होंने वैसे स्थान का चयन किया जहाँ उनके जीविका का साधन आसानी से उपलब्ध हो सके। जमाना के ख्याल से वे नदी–नाले तथा झरने के आस–पास पहाड़–पर्वतों से धिरे क्षेत्रों में अपना गाँव बसाया। आज भी मुण्डा जनजाति के गाँवों की स्थिति तथाकथित स्थिति में देखने को मिलता है। मुण्डा लोग गाँव तथा टोले में स्थायी रूप से निवास करते हैं। प्रखण्ड मुंख्यालयों से इनके गाँव तक जाने के लिए नदी–नाला, पहाड़ी दुर्गम रास्तों से गुजरना पड़ता है। किन्तु सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन होने से इनकी भौगोलिक पृथकता धीरे–धीरे कम होती गयी है।

झारखण्ड में मुण्डा जनजाति की जनसंख्या सन् 2001 ई0 जनगणना अनुसार 1049767 है जो कुल जनजातीय जनसंख्या का 14.81 प्रतिशत है। अविभाजित बिहार में सन् 1961 ई. की जनगणना के अनुसार इनकी कुल जनसंख्या 628931 थी जबकि सन् 1971 ई. की जनसख्यया में इनकी जनसंख्या में वृद्धि होकर 7,23,166 हो गयी। सन् 1981 ई. की जनगणनानुसार इनकी जनसंख्या 845887 थी और 1991 ई. में 899162 थी जबकि 2001 ई. में इनकी जनसंख्या में वृद्धि होकर 1049767 हो गयी है। यद्यपि मुण्डा जनजाति की जनसंख्या सम्पूर्ण झारखण्ड में फैली हुई है किन्तु इनकी अधिकांश जनसंख्या छोटानागपुर प्रमंडलान्तर्गत राँची, खूँटी, सिमडेगा, प0 सिंहभूम तथा सरायकेला–खरसावाँ जिला में पायी जाती है।

मुण्डा जनजाति की अपनी भाषा है जिसे मुण्डारी कहते हैं। मुण्डारी भाषा अस्ट्रो एशियाटिक भाषा परिवार के अन्तर्गत आती है। इस भाषा के अन्तर्गत संथाली, हो, खड़िया, आसुरी, बिरहोर, भूमिज कोरवा आदि भाषाएँ हैं। यह भाषा संस्कृत की तरह क्लिष्ट है। अपनी भाषा को मुण्डा लोग ''होड़ो जगर'' कहते हैं। ''होड़ो जगर'' का अर्थ है ''आदमी की बोली''। अर्थात् ''होड़ो'' का अर्थ है आदमी और ''जगर'' का अर्थ है बोली या भाषा। इस प्रकार से वे अपने को ''होड़ो'' मानते हैं। अर्थात् वे आदमी जाति के हैं और इनकी जाति आदमी के सिवाय कुछ नहीं हैं।

भौगोलिक पृथकता के कारण मुण्डारी भाषा चार भागों में विभक्त है– हसाद : मुण्डारी, नागुरी मुण्डारी, तमड़िया मुण्डारी तथा केरः मुण्डारी। हसादः मुण्डारी में मुण्डा भाषा की मौलिकता है जो खूँटी जिलान्तर्गत खूँटी, मुरहू तथा अड़की प्रखण्ड में पायी जाती है। पश्चिमी सिंहभूम जिले के बन्दगाँव तथा सरायकेला–खरसावाँ जिले के कुचाई एवं खरसावाँ प्रखण्ड में भी इस भाषा का पुट मिलता है। नागुरी मुण्डारी या नागपुरी बोली का सम्मिश्रण है। इसका क्षेत्र राँची जिलान्तर्गत लापुंग तथा खूँटी जिला के कर्रा, तोरपा, रनिया और सिमडेगा जिले के बानो कोलेबिरा तथा सिमडेगा प्रखण्ड है। इसके अलावा उडिसा के सुन्दरगढ़ क्षेत्र के मुण्डाओं में भी यह भाषा पायी जाती है। तमड़िया मुण्डारी में बंगला भाषा का पुट मिलता है। इसका क्षेत्र राँची जिलान्तर्गत तमाड़, बुण्डू और सोनाहातु प्रखण्ड है। अड़की प्रखण्ड के आंशिक क्षेत्र, जहाँ पंचपरगनियाँ तथा बंगला का प्रभाव है, तमड़िया मुण्डारी से प्रभावित है। केरः मुण्डारी में ''र'' ध्वनि की प्रधानता है। इसलिए इसे केरः मुण्डारी कहा गया है जो राँची जिले के शहरी क्षेत्र के आस–पास रहने वाले मुण्डाओं की भाषा है। उराँव जनजाति के लोग जो अपनी ''कुडुख'' भाषा को भूल गये हैं, वे भी केरः मुण्डारी बोलते हैं। यद्यपि भाषा के दृष्टिकोण से मुण्डाओं में भिन्नता है, किन्तु सामाजिक दृष्टि से वे एक हैं।

मुण्डा जनजाति का समाज पितृसत्तात्मक है। पैतृक सम्पत्ति का अधिकारी पुरुष वर्ग ही होता है। पिता के बाद जमीन का हकदार पुत्र ही होता है। इस समाज के अंदर गोत्र का आधार जीव–जन्तु, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी आदि होते हैं। इसका उल्लंघन करने वालों को समाज बाहर से कम की सजा नहीं दी जाती।

मुण्डा जनजाति की कई उप–शाखाएँ हैं। जैसे– कुंपट मुण्डा, महली मुण्डा, नागवंशी मुण्डा इत्यादि। किन्तु मुण्डाओं की मूलतः दो शाखाएँ हैं – महली मुण्डा शाखा और कुंपट मुण्डा शाखा। बड़ी शाखा ''महली को'' और छोटा शाखा ''कुम्पट मुण्डा को'' कहा गया है।

मुण्डा समाज में परिवार का स्वरूप–एकाकी और संयुक्त होता है। एकाकी परिवार में पति–पत्नी एवं उनकी संताने होती हैं और संयुक्त परिवार में पति–पत्नी के अलावा उनके माता–पिता, पोता–पोती तथा उनकी सन्तानें हुआ करती हैं। पुरातन मुण्डा समाज में संयुक्त परिवार हुआ करता था,

किन्तु जैसे–जैसे जनसंख्या में वृद्धि होती गयी संयुक्त परिवार टूटकर एकाकी परिवार में परिणत हुआ। जो भी हो एकाकी एवं संयुक्त दोनों ही प्रकार के परिवार के सदस्यों में जो बुजुर्ग व्यक्ति होते हैं उसे परिवार का मुखिया माना जाता है। उसी के निर्देशन पर परिवार का संचालन होता है। इस परिवार में रहकर समाज के कई रस्मों को पूरा करना पड़ता है। जन्म से मरण तक कई संस्कारों से गुजरना पड़ता है। संस्कारों में जन्म संस्कार, छठी संस्कार, कर्ण–छेद संस्कार, विवाह संस्कार तथा मरण संस्कार मुख्य हैं।

मुण्डा समाज में जब कोई बच्चा जन्म लेता हैं तो उसकी छठी होना आवश्यक है। छठी के बिना नवजात शिशु को सामाजिक प्राणी के रूप में नहीं माना जा सकता। उसी प्रकार से शादी होने के पहले कर्ण–छेद संस्कार का सम्पादन किये बिना शादी वर्जित होती हैं। यदि किसी कारणवश बच्चे का कर्ण–छेद न हुआ हो तो शादी के समय सिन्दूर दान होने के पूर्व कर्ण–छेद की रस्म को पूरा करना आवश्यक हो जाता है। मुण्डाओं का विवाह बहिर्गोत्रीय होता है। विवाह लड़की के यहाँ ''मड़वा'' में सम्पन्न होता है। विवाह के समय गाँव के पुरोहित ''पहान'' पूजा करते हैं। कहीं–कहीं ब्राह्मण हस्तक्षेप करते हैं, किन्तु असलियत रूप में अगर देखा जाय तो इनके धर्मगुरु ''पहान'' ही हैं।

मुण्डा समाज में किसी की मृत्यु होने पर लाश को दफनाने की प्रथा है। कहीं–कहीं बुढ़ा–बुजुर्ग एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों को जलाया जाता है। मरणोपरान्त अस्थि–कलश का विसर्जन कहीं नदी–नाला, पहाड़–पर्वत में नहीं किया जाता, बल्कि एक निश्चित स्थान में गाड़ दिया जाता है। इस स्थान को ''उक ससान'' कहा जाता है। इस पर समाधि के रूप में एक पत्थर रख दिया जाता है। इस पत्थर को ''ससानदीरी'' कहा जाता है। ''ससानदीरी'' मुण्डा गाँवों का असली पहचान है। खतियान जैसे : भू–अभिलेखों में इसे ''हड़गड़ी'' के नाम से दर्ज किया गया है। भिन्न–भिन्न गोत्र के मुण्डाओं की ससानदीरी भिन्न–भिन्न स्थानों में अवस्थित होती है और उसी गाँव में जिस गाँव के वह मूल वाशिन्दा है। इससे यह प्रमाण मिलता है कि कौन मुण्डा किस गाँव का मूल वाशिन्दा है और किस गोत्र का है।

मुण्डा जनजाति के प्राथमिक पेशा कृषि से जो समय बचता है उसे मजदूरी व्यापार इत्यादि में व्यतीत करते हैं। शिक्षित वर्ग के लोग जो नौकरी

करते हैं वे कृषि कार्य को द्वितीयक पेशा के रूप में देखते हैं। मजदूर वर्ग के लोग गाँव में रहते हैं। वे धान, मकई, मडुवा, बाजरा, अरहर, सरसों आदि की खेती करते हैं। कहीं–कहीं बारी–बगान में सब्जी की खेती भी अपने खाने भर के लिए कर लेते हैं। इसके कृषि के औजार पुराने ढंग के होते हैं। वे जंगल के कन्द–मूल तथा साग–सब्जी इत्यादि खाते हैं। मनोरंजन के तौर पर समय–समय पर शिकार खेलने के लिए जंगल चले जाते हैं। शिकार में मारे गये जंगली जानवरों को वे खाते हैं। जैसे – खरगोश, हिरण, जंगली सूअर इत्यादि। शिकार के लिए तीर–धनुष टाँगी–बलुआ, जाल इत्यादि का इस्तेमाल करते हैं। समय–समय पर वे मछली पकड़ने का काम भी करते हैं। उसे बेचते तथा खाते हैं। मछली बेचने से जो पैसा प्राप्त होता है उससे अनाज अथवा वस्त्रादि खरीदते हैं।

गाँव में मुण्डा लोग कच्चे मकान में रहते हैं। इनका मकान दो या तीन कमरे का होता है। एक कमरा मवेशियों के रखने के लिए, दूसरे अनाज तथा विशेष घरेलू सामान रखने के लिए और तीसरा कमरा विश्राम करने तथा रसोई के लिए प्रयुक्त होता है। दीवार मिट्टी की बनी होती है। छत का आवरण खपरैल, पुआल या फूस का होता है। किन्तु जो लोग सरकारी नौकरी में हैं वे प्रयास करते हैं कि पक्का मकान बनाकर शहर में बसें ताकि बच्चों की शिक्षा–दीक्षा में सहूलियत मिल सके।

मुण्डा का धर्म ''सरना पूजा'' है। ये प्रकृति के पुजारी हैं। वे निराकार ब्रह्म के उपासक हैं। इसके सर्वश्रेष्ठ देवता ''सिंगबोंगा'' कहलाता है जो सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, हवा रूपी है। किसी भी धार्मिक अनुष्ठानों के सम्पन्न करने के पूर्व वे सिंगबोंगा की आराधना करते हैं। उसके बाद छोटे–बड़े सभी प्रकार के देवताओं का स्मरण करते हैं। इनके देवताओं में सिंगबोंगा, बुरूबोंगा, इकिर बोंगा, ओड़: बोंगा, ग्राम देवती (देशवाली) आदि प्रमुख हैं। धार्मिक दृष्टिकोण से इनके आदि स्त्री–पुरुष लुटुकुम हड़म–लुटुकुम बुड़ी हैं। अतः मुण्डाओं का यह विश्वास है कि धार्मिक अनुष्ठानों के सम्पादन में जो भी कर्म करते हैं वह आदि स्त्री–पुरुष के बतलाये मार्गों पर होता है। वे बलि प्रथा पर विश्वास करते हैं। बलि के रूप में भेड़–बकरी, मुर्गी इत्यादि देवता को अर्पित करते हैं। इतना ही नहीं आज से 60–70 वर्ष पहले विशेषकर धान बुनने के समय मुण्डाओं के बीच नरबलि प्रथा प्रचलित थी। किन्तु प्रशासनिक

नियंत्रण के प्रभाव से धीरे–धीरे इसमें कमी आती गयी और अब प्रायः समाप्त हो गयी है। गाँव के देवी–देवताओं पर पहान का नियंत्रण रहता है।

मुण्डाओं का पर्व–त्यौहार मौसम के अनुसार भिन्न–भिन्न होता है। इनके त्यौहारों में सरहुल, करमा, बुरू तथा सोहराई मुख्य हैं। सरहुल बसन्त ऋतु (मार्च–अप्रैल) में मनाते हैं। करमा मनाने का समय भादो एकादशी (सितम्बर) में होता है। नवम्बर में सोहराई मनाते हैं और बुरू दिसम्बर में।

सरहुल के अवसर पर सखुआ के फूल ग्रहण किये जाते हैं। इसके पूर्व कृषि कार्य प्रारम्भ किया जाना वर्जित है। करमा में विधिपूर्वक करम डाली को जंगल से काटकर लाया जाता है, उसे आँगन में या अखाड़ा में गाड़ा जाता है। इस अवसर पर कर्मा–धर्मा की कथा कहकर पूजा सम्पन्न की जाती है। पूजा के बाद खुशी से नाचते – गाते हैं। सोहराई मवेशियों का पर्व है। सोहराई के दिन मवेशियों को भर पेट खाना खिलाया जाता है। उस दिन उसे नहलाते–धोते हैं और रंग–बिरंगे रंगों से सजाते हैं तथा धान का झाड़ू मांउड़ बनाकर श्रृंगार करते हैं। इसी दिन गोशाला में स्थित गोरेया की पूजा करते हैं। बुरू के दिन पहाड़ देवता की पूजा की जाती है। इस अवसर पर शिव–पार्वती के लिंग सम्बोधन कर जय घोष की जाती है। यद्यपि मुण्डा जनजाति के लोग प्रकृति के पुजारी होते हैं, किन्तु हिन्दुओं के प्रभाव में आकर हिन्दू देवी–देवताओं की भी पूजा करते हैं। जैसे दुर्गा देवी, काली माँ, शिव–पार्वती इत्यादि। उसी तरह से हिन्दू पर्व–त्यौहार भी मनाते देखे जाते हैं। दशहरा, दीपावली, होली इत्यादि मुण्डा लोग धूम–धाम से मनाते हैं।

मुण्डाओं का राजनीतिक जीवन अपने ढंग का होता है। वे गाँवों में निवास करते हैं। गाँव का एक मालिक होता है जिसे ''मुण्डा'' कहा जाता है। मुण्डा का कार्य गाँव के प्रशासन को ठीक ढंग से चलाना होता है। इनके गाँव में परम्परागत ग्राम पंचायत हुआ करती है जिसे ''हातु पंचायत'' कहा जाता है। इसी पंचायत के माध्यम से गाँव के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक मामलों का निपटारा किया जाता है, किन्तु सरकारी ग्राम पंचायत की स्थापना होने पर परम्परागत ग्राम पंचायत का क्रिया–कलाप गौण होता जा रहा है और उक्त मामलों का निपटारा सरकारी ग्राम पंचायत में ही होने लगा है। बहुत सी ग्राम पंचायतों के मुखिया मुण्डा जनजाति के हैं। मुण्डाओं में

संसद एवं विधानसभा सदस्य के रूप में निर्वाचन होने से इनकी राजनैतिक स्थिति में दिनोदिन सुधार होती जा रही है।

जहाँ तक सामाजिक परिवर्तन की बात है, बाहरी प्रभाव के कारण मुण्डाओं की सामाजिक स्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है। आधुनिकता के बोध में मुण्डा लोग कारेया पहनाना छोड़कर धोती–कुर्ता, पैंट–शर्ट तथा चप्पल–जूता पहनना शुरू किया है। महिलाएँ ब्लाउज नहीं पहनती थीं वे अब ब्लाउज पहनती हैं। अपनी मुण्डारी भाषा के अलावा हिन्दी भाषा को समझने लगे हैं। शिक्षित परिवारों में बच्चों का जन्म–दिन मनाया जाता है जबकि मुण्डाओं में ऐसी प्रथा नहीं थी। शादी–विवाह में ब्राह्मण पूजा करने लगे हैं। फलतः विवाह के अवसर पर वर–वधू को संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों का मंत्र उच्चारण ब्राह्मण द्वारा कराया जाता है। जीविका की खोज में नये–नये पेशों में विशेषीकरण हासिल करने लगे हैं। जैसे– बढ़ईगीरी, राज मिस्त्री, व्यापार आदि। इससे आर्थिक लाभ पाकर सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास कर रहे हैं। घर में कुर्सी–टेबुल आदि उपस्करों की आवश्यकता महसूस करते हैं। साईकिल, घड़ी, ट्रांजिस्टर जैसे विलासिता का सामान ने भी मुण्डाओं के जीवन को प्रभावित किया है। इसका मुख्य कारण है सांस्कृतिक सम्पर्क, दैनिक मजदूरी की खोज, सरकारी नौकरी में आना इत्यादि।

सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न विकास कार्यक्रमों जैसे–जवाहर रोजगार योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम (एन.आर.ई.पी.), ग्रामीण भूमिहीन नियोजन गारंटी योजना (आर.एल.ई.जी.पी.), ट्राइसेम, योजना नरेगा इत्यादि के क्रियान्वित होने से मुण्डा जनजाति के जीवन स्तर में सुधार होने लगा है। किन्तु मुण्डाओं में अभी भी शिक्षा का अभाव है। यही कारण है कि उपर्युक्त विकास कार्यक्रमों को वे सही रूप में समझ नहीं पाते हैं और उसे अमल करने में थोड़ी–बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अतः मुण्डा जनजातियों के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

संदर्भ-सूची

1. राय एस. सी., दि मुण्डाज एण्ड देयर कण्ट्री, 1912 कलकत्ता।
2. रिजले, एच. एच., दि ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स ऑफ बंगाल, वोलूम II, 1891 कलकत्ता।
3. दिवाकर आर. आर., बिहार थ्रो दि एज, जनवरी 1959 कलकत्ता।
4. हॉफ मैन, रेभ, जॉन एस. जे., इनसाक्लोपिडिया मुण्डारिका, पटना, वोलूम 8, 1933
5. लैण्ड एण्ड पिपुल ऑफ ट्राइबल बिहार, 1961 बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची–8
6. विद्यार्थी डॉ. ललिता प्रसाद, बिहार के आदिवासी, 1960, राँची।
7. उराँव डॉ. प्रकाश चन्द्र, लैण्ड एण्ड पिपुल ऑफ झारखण्ड।
8. जनगणना प्रतिवेदन – 1961, 1971, 1981, 1991, 2001